2009 (1) एससीआर 1109

कर्नाटक पावर ट्रांसमिशन कॉर्पोरेशन और अन्य

बनाम

अशोक आयरन वर्क्स प्रा. लिमिटेड

सिविल अपील संख्या 2003/1879

निर्णय: 09-02-2009

[मार्कंडेय काटजू और औरएम लोढ़ा, जेजे।]

धारा 2(1)(डी), 2(1)(एम), 2(1)(ओ) और 2(1)(जी) 'उपभोक्ता', 'व्यक्ति', 'सेवा', 'कमी'-कर्नाटक बिजली प्रसारण से नुकसान का दावा करने वाली एक विनिर्माण इकाई द्वारा शिकायत संबंधित बिजली की आपूर्ति में देरी धारा 2 (1)(घ)(ii) 2002 के अधिनियम 62 के संशोधन से पहले की अवधि के लिए- आदेश दिया गया- धारा 2(1)(एम) में 'व्यक्ति' की परिभाषा समावेशी है और संपूर्ण नहीं- धारा 2(1)(घ) सपठित धारा 2 (1)(एम) के मतलब के अनुसार कम्पनी एक व्यक्ति है-उपभोक्ता को बिजली की आपूर्ति के. पी. टी. सी. द्वारा बिजली की बिक्री नहीं है, बल्कि धारा 2(1)(0) के अन्तर्गत सेवा मनी जयेगी और, यदि आपूर्ति निर्धारित समय के भीतर

प्रदान नहीं किया जाती है तो धारा 2(1)(जी) के तहत सेवा की कमी का मामला हो सकता है- इसलिए, शिकायत है रखरखाव योग्य-क़ानूनों की व्याख्या।

शब्द और छंदः

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम1986 की धारा 2(1)(एम) का अभिव्यक्ति 'शामिल'- का अर्थ।

प्रतिवादी एक प्राईवेट लिमिटेड कंपनी जो कि लोहे के सामान का बनाने का कार्य करती है, ने वर्ष 2003 की सीए नं० 1879 में एक शिकायत उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के तहत जिला उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम के समक्ष अपीलार्थी के विरूद्व बिजली आपूर्ति में देरी के संबंध में क्षति राशि हेतु दर्ज की। यह कहा गया था कि मांगे गए धन को 1.2.1991 पर जमा किया गया था, जबकि बिजली की आपूर्ति नवम्बर माह 1992 से चालू की गई थी। अपीलार्थी ने एक प्रारंभिक मुद्दा शिकायत की ररखरखाव के बारे में आपत्ति यह तर्क देते हुए कि शिकायतकार्ता वाणिज्यिक गतिविधि में संलग्न था और बिजली "माल" है। अतः बाणिज्यिक के लिये एक वाणिज्यिक उपभोक्ता को की गई डिक्री अधिनियम के दायरे से बाहर है। जिला फोरम ने शिकायत को विचारणीय नहीं बताते हुए खारिज कर दिया। राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग ने शिकायत को बनाये रखने योग्य माना, जिस पर निगम द्वारा अपील दायर की गई।

2002 की सिविल अपील नं० 17784 में, अपीलार्थी जो कि एक मात्र बैट्री चार्जिंग ईकाई का मालिक था, उसने कर्नाटक विधुत प्रसारण निगम के विरूद्व एक शिकायत जिला फोरम में निगम द्वारा की गई मांग के संबंध में दर्ज कराई थी। जिला मंच द्वारा अपीलार्थी के पक्ष में निर्णय दिया गया था। परन्तु राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया कि शिकायतकर्ता अधिनियम की धारा 2 (1) (डी) के तहत "उपभोक्ता "नहीं था, जिस पर शिकायतकर्ता द्वारा यह अपील दायर की गई।

न्यायालय के समक्ष विचार के लिये यह प्रश्न थे :- (1) क्या एक निजी लिमिटेड कंपनी एक "व्यक्ति "है, जैसा कि उपभोक्ता अधिनियम 1986 की धारा 2 (1) (डी) में विचार किया गया है। (2) क्या केपीटीसी द्वारा उपभोक्ता को दी जाने वाली बिजली की आपूर्ति अधिनियम की धारा 2 (1) (डी) (i) के तहत बिजली की बिक्री और खरीद है। (3) क्या केपीटीसी द्वारा की जा रही बिजली की आपूर्ति अधिनियम की धारा 2 (1) (O) व धारा 2 (1) (डी) (ii) के दायरे में है।

2003 की सिविल अपील संख्या 1879 को खारिज करते हुए व 2002 की सिविल अपील नं० 7784 को स्वीकृत करते हुए न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि:-

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1996 की धारा 2 (1) (m)। "व्यक्ति "शब्द को परिभाषित करते हुए उसे चार श्रेणियों जो कि (1) एक फर्म,

चाहे वह पंजीकृत हो या नहीं (2) हिन्दू अविभाजित परिवार (3) एक सहकारी समाज (4) व्यक्तियों का प्रत्येक अन्य संघ चाहे वह सोसायटी पंजीकरण अधिनियम 1860 के तहत पंजीकृत हो या नहीं, तक सीमित नहीं किया जा सकता। इन शब्दों में यह नहीं कहा गया है कि "व्यक्ति "शब्द का अर्थ एक या चार चीजों जो उल्लेखित है होगा, बल्कि इसमें वह शामिल रहेंगी। धारा 2 (1) (**m**) में "व्यक्ति "की परिभाषा समावेशी है, संपूर्ण नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कंपनी धारा 2 (1) (डी) सपठित धारा 2 (1) (**m**) के अनुसार एक व्यक्ति है। (पैरा 15 व 18)

दक्षिण गुजरात रूफिंग टाईल निर्माता एसोसिएशन व अन्य बनाम गुजरात राज्य और अन्य (1976) 4 एससीसी 608 एवं भारतीय रिजर्व बैंक बनाम पीअरलेंस जनरल वित्त और निवेश कंपनी लिमिटेड व अन्य (1987) 1 एससीसी 424, संदर्भित किया गया है।

दिलवर्थ बनाम डाक टिकिट आयुक्त में लॉर्ड वाटसन (1899) एसी 99, संदर्भित किया गया।

2.1 केपीटीसी द्वारा उपभोक्ता को बिजली की आपूर्ति बिजली की बिक्री नहीं। अभिव्यक्ति "आपूर्ति ""ब्रिक्री "का पर्याय नहीं है। आपूर्ति का मतलब ब्रिक्री नहीं है। यह अभिव्यक्ति कि "लेकिन इसमें एक व्यक्ति शामिल नहीं है, जो कि व्यवसायिक उद्वेश्य के लिये एसी सेवाओं का लाभ उठाता है "जो कि 2002 के अधिनियम 62 कीधारा 2 (1) (डी) (**ii**) में उल्लेखित है

हस्तगत मामले पर लागू नहीं होंगें क्योंकि हस्तगत विवाद संशोधन से पहले की अवधि से संबंधित है। (पैरा 24)

सीएसटी बनाम एमपी विद्युत बोर्ड, जबलपुर, केस 1969 (2) **एससीआर** 939, स्टेट ऑफ आंध्र प्रदेश बनाम राष्ट्रीयथर्मल पावर कॉर्पोरेशन, (2002) 5 एससीसी 203, **इंडियन एल्युमीनियम कंपनी बनाम केरल राज्य**, (1996) 7 **एससीसी** 637, दक्षिणी पेट्रोकेमिकल इंडस्ट्रीज कंपनी लिमिटेड बनाम विद्युत निरीक्षक और ईटीआईओ और अन्य, (2007) 5 एससीसी 447, एसडीओ, बिजली एवं अन्य. वी. बीएस लोबाना, (2005) 6 एससीसी 280 **संदर्भित किया गया।**

2.2 **वास्तव में, कंपनी ने अपने विवाद को धारा 2 (1) (डी) (ii) के अन्तर्गत उठाया गया है ना कि धारा 2 (1) (डी) (I) में, क्योंकि कंपनी द्वारा समय के भीतर सेवाओं को नहीं प्रदान किये जाने के संबंध में विवाद पेश किया है। शिकायत के ररखरखाव के संबंध में अतः यह देखना महत्वपूर्ण है कि धारा 2 (1) (डी) (ii) के अन्तर्गत सेवा की कमी का अर्थ क्या है।**

3. अधिनियम 1986 की धारा 2 (1) (O)के तहत, "सेवा "का अर्थ यह है कि किसी भी विवरण की सेवा जो कि उसके संभावित उपयोगकर्ता को उपलब्ध कराई जाती है और इसमें बिजली या अन्य उर्जा की आपूर्ति जैसे सुविधाओं के प्रावधानों को शामिल किया गया है। जैसा कि "सेवा" कि

परिभाषा से इंगित होता है, विधुत उर्जा की आपूर्ति के संबंध में प्रावधानित की गई सुविधाएं एक सेवा है। बोर्ड या इस मामले में केपीटीसी द्वारा उपभोक्ता को की गई बिजली की आपूर्ति धारा 2 (1) (डी) के दायरे में सेवा होने के कारण आयेगी और यदि बिजली की आपूर्ति उपभोक्ता को समय पर नहीं कराई जाती है जैसा कि उनके समक्ष तय हुआ था तो धारा 2 (1) (G) के तहत सेवा की कमी का मामला हो सकता है। (पैरा 22)

4.1 अपीलकर्ता कंपनी द्वारा जिला फोरम के समक्ष की गई शिकायत सी०ए० संख्या 1879/2003 को चलने योग्य है। राज्य और राष्ट्रीय आयोगों द्वारा पारित आदेशों की पुष्टि की जाती है और इस प्रकार यह शिकायत जिला फोरम को कानून के अनुसार निपटारा करने के लिए प्रतिप्रेषित की जाती है।

4.2 शिकायतकर्ता द्वारा सी०ए० नं० 7748/2002 में की गई शिकायत चलने योग्य है। राज्य व राष्ट्रीय आयोगों द्वारा पारित किये गये आदेशों को अपास्त किया जाता है। अपील संख्या 168/1994 जो कि राज्य आयोग की पत्रावली है, उसे कानून अनुसार निपटारे के लिए पुर्नस्थापित किया जाता है। (पैरा 27 और 28)

संदर्भित मामले:

(1976) 601	4	एससीसी संदर्भित	पैरा 11

(1987)	1	एससीसी	संदर्भित	पैरा 11
424				
(1899)	एसी	99	संदर्भित	पैरा 12
1969	(2)	एससीआर	संदर्भित	पैरा 19
939				
(2002)	5	एससीसी	संदर्भित	पैरा 19
203				
(1996)	7	एससीसी	संदर्भित	पैरा 19
637				
(2007)	5	एससीसी	संदर्भित	पैरा 20
447				
(2005)	6	एससीसी	संदर्भित	पैरा 23
280				

सिविल अपील क्षेत्राधिकार: सिविल अपील नं० 1879/2003।

राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग नई दिल्ली द्वारा रिवीजन पिटीशन नं० 791/2000 में पारित निर्णय व आदेश दिनांकित 07/10/2002 से।

साथ में

वर्ष 2002 की सी०ए० नं० 7784.

अपीलार्थी की ओर से विजय कुमार ओर वी०एन०रघुपति

प्रत्यर्थी की ओर से किरन सूरी, के०एच० नोबिन सिंह।

निर्णय औरएम लोढ़ा, जे. द्वारा दिया गया-

विशेष अनुमति द्वारा इन दोनों अपीलों पर, जिनमें सामान्य प्रश्न शामिल थे, एक साथ सुनवाई की गई और इस निर्णय द्वारा उनका निपटारा किया जा रहा है।

2. चूंकि मुख्य तर्क सिविल अपील संख्या 1879/2003 में दिए गए हैं, हम उस अपील के तथ्यों को लेते हैं, जिन्हें इस प्रकार संक्षेप में रखा गया है। मेसर्स अशोक आयरन वर्क्स प्राइवेट लिमिटेड (संक्षेप में, 'कंपनी') एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी है और लौह उत्पादों के निर्माण की गतिविधि में लगी हुई है। कंपनी ने कर्नाटक विद्युत बोर्ड (अब कर्नाटक पावर ट्रांसमिशन कॉर्पोरेशन और इसके बाद 'केपीटीसी'के रूप में संदर्भित) को विद्युत ऊर्जा (2500 केवीए) की आपूर्ति के लिए आवेदन किया था। कंपनी द्वारा किए गए आवेदन को सिंगल विंडो एजेंसी द्वारा मंजूरी दे दी गई और 1500 केवीए विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति को मंजूरी दे दी गई। बताया जाता है कि कंपनी ने मांग के अनुसार 1 फरवरी, 1991 को 8,40,000/- रु रुपये की राशि जमा की है। केपीटीसी ने सहमति के अनुसार बिजली की आपूर्ति

शुरू नहीं की और कंपनी को स्वीकृत ऊर्जा की आपूर्ति के लिए केपीटीसी को निर्देश देने के लिए कर्नाटक उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ा। 16 अप्रैल, 1992 को, उच्च न्यायालय ने केपीटीसी को मंजूरी के अनुसार तत्काल विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति करने का निर्देश दिया और बाद में, बिजली की आपूर्ति का समय उच्च न्यायालय द्वारा 21 जुलाई, 1992 तक बढ़ा दिया गया। केपीटीसी ने कंपनी से 8,38,000/- रुपये की अतिरिक्त मांग उठाई और कुल 1,34,000/- रुपये की और मांग की गई। बताया जाता है कि कंपनी ने उक्त राशि जमा कर दी है। हालाँकि, बिजली की वास्तविक आपूर्ति नवंबर, 1992 के महीने में शुरू हुई। कंपनी ने तदनुसार उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (संक्षेप में, 'अधिनियम, 1986') के तहत उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम, बेलगाम के समक्ष एक शिकायत बिजली आपूर्ति में देरी के लिए 99,900/- रु. रुपये की क्षति के सम्बन्ध में दर्ज की। शिकायत का केपीटीसी द्वारा विरोध किया गया था, और, अन्य बातों के साथ, प्रारंभिक आपत्ति उठाई गई थी कि शिकायत कायम रखने योग्य नहीं थी क्योंकि शिकायतकर्ता वाणिज्यिक गतिविधि में लगा हुआ था और बिजली सामान थी, किसी वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए किसी वाणिज्यिक उपभोक्ता को माल की बिक्री अधिनियम, 1986 के दायरे से बाहर थी।

3. चूंकि ऐसी कई शिकायतें थीं जिनमें ऐसी शिकायतों की ररखरखाव से संबंधित समान आपत्ति शामिल थी, इन सभी शिकायतों को जिला फोरम

द्वारा 10 सितंबर, 1993 के एक सामान्य आदेश द्वारा एक साथ लियागया और निपटाया गया। जिला फोरम केपीटीसी द्वारा उठाई गई आपत्ति से सहमत थे और उनके द्वारा यह माना गया कि शिकायतें सुनवाई योग्य नहीं थीं।

4. कंपनी ने कर्नाटक राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग (संक्षेप में, 'राज्य आयोग') के समक्ष अपील में जिला फोरम के आदेश को चुनौती दी। 10 सितंबर, 1993 के आम फैसले के खिलाफ कुछ अन्य अपीलें भी राज्य आयोग के समक्ष दायर की गईं। राज्य आयोग ने अपने आदेश दिनांक 15 जून, 1995 द्वारा जिला फोरम के आदेश को रद्द कर दिया और माना कि शिकायतें अधिनियम, 1986 के प्रावधानों के तहत "उपभोक्ता" की परिभाषा के अंतर्गत आने योग्य थीं।

5. केपीटीसी ने राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग (संक्षेप में, "राष्ट्रीय आयोग") के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका दायर करके राज्य आयोग के आदेश को चुनौती दी। ऐसा प्रतीत होता है कि शुरू में पुनरीक्षण याचिका को डिफ़ॉल्ट रूप से खारिज कर दिया गया था, लेकिन बाद में, केपीटीसी द्वारा किए गए बहाली के आवेदन पर, पुनरीक्षण याचिका को बहाल कर दिया गया था, लेकिन मेसर्स वेलमेल्ट स्टील कास्ट प्रा. लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य विद्युत बोर्ड के मामले में 23 नवंबर, 2001 के फैसले

के मद्देनजर इसे खारिज कर दिया गया था। इसी आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील 1879/2003 उत्पन्न होती है।

6. केपीटीसी के विद्वान वकील श्री एस.के. कुलकर्णी ने हमारे समक्ष निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ दीं:

(i) केपीटीसी के खिलाफ उपभोक्ता फोरम के समक्ष कंपनी द्वारा की गई शिकायत अक्षम थी और सुनवाई योग्य नहीं थी क्योंकि शिकायतकर्ता अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(एम) के तहत 'व्यक्ति' नहीं है और इस तरह शिकायतकर्ता धारा 2(1)(डी) में उस अभिव्यक्ति की परिभाषा के प्रारंभिक अंग के भीतर 'उपभोक्ता'नहीं है।

(ii) शिकायतकर्ता अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(डी)(i) की परिभाषा के तहत 'उपभोक्ता' नहीं है क्योंकि उसने वाणिज्यिक उत्पादन के लिए केपीटीसी से विद्युत ऊर्जा खरीदी थी।

(iii) शिकायतकर्ता का मामला अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(डी) (ii) के दायरे में नहीं आता है। धारा 2(1)(ओ) में अभिव्यक्ति "सेवा" को व्यापक रूप से नहीं पढ़ा जा सकता है। इसका अर्थ यह है कि यह "सुविधाओं" शब्द से घिरा हुआ है, जिससे सेवा केवल विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति के संबंध में सुविधाओं के उपभोक्ताओं तक ही सीमित है। दूसरे शब्दों में, बिजली की बिक्री और आपूर्ति से संबंधित विवाद अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(ओ) के तहत "सेवा" के दायरे में नहीं आता है। यदि

तर्क के लिए, इसे "सेवा"माना जाता है ", चूंकि यह व्यावसायिक उद्देश्य के लिए है, इसलिए इसे उप-खंड (1)(डी)(ii) के दायरे से बाहर रखा गया है।

7. इस स्तर पर, अधिनियम, 1986 के कुछ प्रावधानों का उल्लेख करना उचित होगा जो वर्ष 1992 में प्रासंगिक समय पर मौजूद थे जो केपीटीसी के विद्वान वकील की प्रस्तुतियों पर विचार करने के लिए प्रासंगिक हैं।

8. धारा 2(1)(डी) "उपभोक्ता" को इस प्रकार परिभाषित करती है:-

"उपभोक्ता" का अर्थ कोई भी व्यक्ति है, जो-

(i) किसी भी सामान को ऐसे प्रतिफल के लिए खरीदता है जिसका भुगतान किया गया है या वादा किया गया है या आंशिक रूप से भुगतान किया गया है और आंशिक रूप से वादा किया गया है, या आस्थगित भुगतान की किसी प्रणाली के तहत और इसमें उस व्यक्ति के अलावा जो भुगतान या वादा किए गए प्रतिफल के लिए ऐसा सामान खरीदता है या आंशिक रूप से भुगतान किया गया या आंशिक रूप से वादा किया गया, या आस्थगित भुगतान की किसी भी प्रणाली के तहत, ऐसे सामान का कोई भी उपयोगकर्ता शामिल है जब ऐसा उपयोग ऐसे व्यक्ति की मंजूरी के साथ किया जाता है, लेकिन इसमें वह व्यक्ति शामिल नहीं है जो पुनर्विक्रय या किसी वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए ऐसा सामान प्राप्त करता है, या

(ii) किसी भी सेवा को ऐसे प्रतिफल के लिए किराए पर लेता है जिसका भुगतान किया गया है या वादाकिया गया है या आंशिक रूप से भुगतान किया गया है और आंशिक रूप से वादा किया गया है, या आस्थगित भुगतान की किसी प्रणाली के तहत और इसमें उस व्यक्ति के अलावा ऐसी सेवाओं का कोई भी लाभार्थी शामिल है जो भुगतान या वादा किए गए प्रतिफल के लिए सेवाएं किराए पर लेता है, या आंशिक रूप से भुगतान किया गया और आंशिक रूप से वादा किया गया, या आस्थगित भुगतान की किसी भी प्रणाली के तहत, जब ऐसी सेवाओं का लाभ पहले उल्लेखित व्यक्ति की मंजूरी से लिया जाता है।

9. धारा 2(1)(एम) के अनुसार, "व्यक्ति" में शामिल हैं:-

"(i) कोई फर्म चाहे पंजीकृत हो या नहीं,

(ii) एक हिंदू अविभाजित परिवार,

(iii) एक सहकारी समिति,

(iv) व्यक्तियों का प्रत्येक अन्य संघ चाहे सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के तहत पंजीकृत हो या नहीं।"

10. धारा 2(1)(ओ) "सेवा" को इस प्रकार परिभाषित करती है:

"सेवा का अर्थ किसी भी प्रकार की सेवा है जो संभावित उपयोगकर्ताओं को उपलब्ध कराई जाती है और इसमें बैंकिंग,

वित्तपोषण, बीमा, परिवहन, प्रसंस्करण, विद्युत या अन्य ऊर्जा की आपूर्ति, बोर्ड या आवास या दोनों, मनोरंजन, मनोरंजन के संबंध में सुविधाओं का प्रावधान शामिल है। या किसी समाचार या अन्य जानकारी को प्रसारित करना, लेकिन इसमें नि:शुल्क या व्यक्तिगत सेवा के अनुबंध के तहत कोई सेवा प्रदान करना शामिल नहीं है।"

पुन: विवाद-(i)

11. हमारे निर्धारण के लिए प्रश्न यह है: क्या एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी एक 'व्यक्ति' है जैसा कि धारा 2(1)(डी) के तहत विचार किया गया है। केपीटीसी के विद्वान वकील का तर्क यह है कि धारा 2(1)(एम) में निर्दिष्ट और सूचीबद्ध व्यक्ति ही उस खंड के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों की एकमात्र श्रेणियां हैं और कंपनी अधिनियम के तहत निगमित कंपनी इसके अंतर्गत शामिल नहीं है। विद्वान वकील प्रस्तुत किया गया कि एक कंपनी को 'व्यक्ति' की परिभाषा से बाहर रखा गया है क्योंकि अधिनियम, 1986 का उद्देश्य व्यक्तियों या व्यक्तियों की चार श्रेणियों की सामूहिकताओं या संघों जो मुकदमा करने या उसका सामना करने के लिए, कानूनी संस्थाएं बन सकते हैं, को एक किफायती उपाय प्रदान करना है । विद्वान वकील के अनुसार, निगमित कंपनियों को कभी भी अधिनियम, 1986 के तहत सम्मिलित करने का इरादा नहीं था क्योंकि वे हमेशा कानून में प्रदान किए गए सामान्य उपाय का पालन कर सकते थे। विद्वान वकील ने यह भी कहा

कि "शामिल" शब्द को "मतलब" के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। इस संबंध में, विद्वान वकील ने इस न्यायालय के दो निर्णयों पर भरोसा जताया, (1) *दक्षिण गुजरात रूफिंग टाइल्स मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन और अन्य। गुजरात राज्य और अन्य* [(1976) 4 एससीसी601] (2) *भारतीय रिजर्व बैंक बनाम पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड और अन्य*[(1987) 1 एससीसी424)]

12. *दिलवर्थ बनाम कमिश्नर ऑफ स्टैम्प्स* (1899) एसी 99 में लॉर्ड वॉटसन ने निम्नलिखित उत्कृष्टवर्णन दिया:

क़ानून के मुख्य भाग में आने वाले शब्दों या वाक्यांशों के अर्थ को बढ़ाने के लिए "शामिल" शब्द का उपयोग आम तौर पर व्याख्या खंडों में किया जाता है, और जब इसका उपयोग इस प्रकार किया जाता है तो इन शब्दों या वाक्यांशों को समझने योग्य माना जाना चाहिए, न केवल ऐसी चीजें जो वे अपने प्राकृतिक आयात के अनुसार इंगित करते हैं, बल्कि वे चीजें भी जिन्हें व्याख्या खंड घोषित करता है कि वे शामिल होंगे। लेकिन "शामिल" शब्द किसी अन्य निर्माण के लिए अतिसंवेदनशील है, जो अनिवार्य हो सकता है, यदि अधिनियम का संदर्भ यह दिखाने के लिए पर्याप्त है कि इसका उपयोग केवल परिभाषित शब्दों या अभिव्यक्तियों के प्राकृतिक महत्व को जोड़ने के उद्देश्य से नहीं किया गया था। यह "मतलब और शामिल" के बराबर हो सकता है, और उस स्थिति में यह उस अर्थ की

विस्तृत व्याख्या कर सकता है, जो अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, इन शब्दों या अभिव्यक्तियों के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा होना चाहिए।

13. दिलवर्थ (सुप्रा) और कुछ अन्य निर्णय पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड में विचार के लिए आए और इस न्यायालय ने कानूनी स्थिति का सारांश दिया कि विधानमंडल द्वारा समावेशी परिभाषा का उपयोग किया जाता है, (एक) शब्दों या वाक्यांशों के अर्थ को बड़ा करना ताकि शब्दों के सामान्य, लोकप्रिय और प्राकृतिक अर्थ और उस अर्थ को भी ग्रहण किया जा सके जिसे क़ानून इसके लिए विशेषता देना चाहता है, (दो) ऐसे अर्थ शामिल करना जिनके बारे में कुछ विवाद हो सकता है, (तीन) कुछ समान विशेषताओं वाले लेकिन अलग-अलग नामों से होने वाले सभी लेनदेन को एक नामकरण के तहत लाना।

14. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि किसी शब्द या अभिव्यक्ति की व्याख्या पाठ और संदर्भ पर निर्भर होनी चाहिए। विधायिका द्वारा 'शामिल' शब्द का सहारा अक्सर विधायिका की मंशा को दर्शाता है कि वह ऐसी अभिव्यक्ति को व्यापक और विस्तृत अर्थ देना चाहती थी। हालाँकि, कभी-कभी संदर्भ से यह संकेत मिल सकता है कि 'शामिल'शब्द का अर्थ "मतलब" है। किसी अधिनियम की व्यवस्था, संदर्भ और उद्देश्य ऐसे अधिनियम के प्रयोजनों के लिए 'शामिल' शब्द की व्याख्या के लिए पर्याप्त मार्गदर्शन प्रदान कर सकती है।

15. धारा 2(1)(एम) जो चार श्रेणियों की गणना करती है, अर्थात्, (i) एक फर्म चाहे पंजीकृत हो या नहीं, (ii) एक हिंदू अविभाजित परिवार, (iii) एक सहकारी समिति, और (iv) व्यक्तियों का प्रत्येक अन्य संघ, चाहे वह सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के तहत पंजीकृत हो या नहीं, 'व्यक्ति' को परिभाषित करते समय उसे प्रतिबंधात्मक नहीं माना जा सकता है और इन चार श्रेणियों तक ही सीमित नहीं रखा जा सकता है क्योंकि ऐसा नहीं कहा गया है 'व्यक्ति' का अर्थ गिनाई गई चीजों में से एक या अन्य होगा, लेकिन यह उन्हें 'शामिल' करेगा।

16. सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 3(42) में 'व्यक्ति' को परिभाषित किया गया है:

> "व्यक्ति में कोई भी कंपनी या एसोसिएशन या व्यक्तियों का निकाय शामिल होगा चाहे वह निगमित हो या नहीं।"

17. अधिनियम, 1986 की धारा 3, जिस पर केपीटीसी के विद्वान वकील ने भरोसा जताया गया है, प्रावधानित करता है कि अधिनियम के प्रावधान वर्तमान में लागू किसी भी अन्य कानून के अतिरिक्त हैं और उसका निरादर नहीं करते हैं। यह प्रावधान केपीटीसी के तर्क में मदद करने के बजाय यह सुझाव देगा कि 1986 के अधिनियम में प्रदान किए गए उपाय उस समय लागू किसी भी अन्य कानून के प्रावधानों के अतिरिक्त है।

यह किसी भी तरह से 'व्यक्ति'की परिभाषा को सीमित करने का कोई संकेत नहीं देता है।

18. धारा 2(1)(एम), सभी सवालों से परे, एक व्याख्या खंड है, और विधायिका द्वारा 'व्यक्ति', जैसा कि धारा 2(1)(डी) में है, अभिव्यक्ति का अर्थ निकालने में इसे ध्यान में रखने का इरादा रहा होगा। धारा 2(1)(एम) में 'व्यक्ति'को परिभाषित करते समय, विधायिका का इरादा कभी भी कंपनी जैसे न्यायिक व्यक्ति को बाहर करने का नहीं था। वास्तव में, इसमें उल्लिखित गणना के माध्यम से चार श्रेणियां सांकेतिक हैं, श्रेणियां (i), (ii) और (iv) अनिगमित हैं और श्रेणी (iii) कॉर्पोरेट हैं, इसके इरादे में निकाय कॉर्पोरेट के साथ-साथ अनिगमित निकाय भी शामिल हैं। धारा 2(1)(एम) में 'व्यक्ति'की परिभाषा समावेशी है न कि संपूर्ण। हमें यह स्वीकार करने में कोई संदेह नहीं है कि धारा 2(1)(एम) सपठित धारा 2(1)(डी) के अर्थ के अंतर्गत कंपनी एक व्यक्ति है और हम तदनुसार मानते हैं।

<u>पुनः: विवाद- (ii) और (iii)</u>

19. *सीएसटी बनाम एमपी इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड, जबलपुर* में, केस 4 1969 (2) एससीआर 939, इस न्यायालय ने माना कि बिजली 'माल'है। *आंध्र प्रदेश राज्य बनाम नेशनल थर्मल पावर कॉरपोरेशन, (2002) 5 एससीसी 203* के मामले में संविधान पीठ ने एमपी बिजली बोर्ड में की गई टिप्पणियों को इस हद तक मंजूरी दे दी कि विद्युत ऊर्जा को प्रसारित,

स्थानांतरित, वितरित, धारण किया जा सकता है आदि, लेकिन इस टिप्पणी से सहमत नहीं थे कि विद्युत ऊर्जा को संग्रहित किया जा सकता है। संविधान पीठ ने माना कि विद्युत ऊर्जा की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसका उत्पादन या उत्पादन इसकी खपत के साथलगभग तुरंत मेल खाता है। *भारतीय एल्युमीनियम कंपनी बनाम केरल राज्य*, (1996) 7 एससीसी 637 के मामले में, इस न्यायालय द्वारा विद्युत ऊर्जा की विशेषताओं पर इस प्रकार ध्यान दिया गया, "...आपूर्ति और खपत की निरंतरता उसी क्षण से शुरू होती है जब विद्युत ऊर्जा मीटरों से होकर गुजरती है और मीटर रीडिंग दर्ज होते ही बिक्री भी हो जाती है। सभी तीन चरण या चरण (यानी बिक्री, आपूर्ति और उपभोग) बिना किसी अंतराल के होते हैं। यह सच है कि बिजली पैदा करने के स्थान से विद्युत हाईटेंशन ट्रांसफार्मर के माध्यम से उपभोक्ताओं की इकाइयों पर स्थापित सब-स्टेशन को बिजली की आपूर्ति की जाती है और वहां से मीटर को बिजली की आपूर्ति की जाती है...।"

20. हाल ही में, इस न्यायालय ने *दक्षिणी पेट्रोकेमिकल इंडस्ट्रीज कंपनी लिमिटेड बनाम बिजलीनिरीक्षक और ईटीआईओ और अन्य*, (2007) 5 एससीसी 447 केमामले में निम्नलिखित प्रासंगिक टिप्पणियां की:

> "149. ऐसा हो सकता है कि बिजली को "माल" माना गया हो, लेकिन इसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 366 के खंड

(12) में निहित "माल" की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए माना जाना चाहिए। जब इस न्यायालय ने बिक्री कर कानूनों और अन्य कर कानूनों को लागू करने के उद्देश्य से बिजली को "माल"माना, तो हमारी राय में, इसका भारत का संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची II की प्रविष्टि 53 के निर्माण से कोई लेना- देना नहीं होगा।।"

21. विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 की धारा 49 निम्नलिखित प्रावधान करती है:

49. *बोर्ड द्वारा लाइसेंसधारियों के अलावा अन्य व्यक्तियों को बिजली की बिक्री का प्रावधान-* (1) इस अधिनियम के प्रावधानों और विनियमों के अधीन, यदि कोई इस संबंध में बनाया गया है, तो बोर्ड किसी भी ऐसे व्यक्ति को बिजली की आपूर्ति कर सकता है जो लाइसेंसधारी नहीं है, ऐसे नियमों और शर्तों पर जो बोर्ड उचित समझता है और ऐसी आपूर्ति के प्रयोजनों के लिए समान टैरिफ बना सकता है।

(2) समान टैरिफ तय करने में, बोर्ड निम्नलिखित सभी या किसी भी कारक को ध्यान में रखेगा, अर्थात्:-

ए) आपूर्ति की प्रकृति और वे उद्देश्य जिनके लिए इसकी आवश्यकता है,

(बी) राज्य के भीतर सबसे कुशल और किफायती तरीके से बिजली की आपूर्ति और वितरण का समन्वित विकास, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में ऐसे विकास के संदर्भ में जो फिलहाल लाइसेंसधारी द्वारा सेवा नहीं दी जा रही है या पर्याप्त रूप से सेवा नहीं दी गई है,

(सी) ऐसी आपूर्ति के लिए तरीकों और शुल्क की दरों का सरलीकरण और मानकीकरण,

(डी) अल्प विकसित क्षेत्रों में बिजली की आपूर्ति का विस्तार और सस्ता करना।

(3) इस धारा के पूर्वगामी प्रावधानों में से कुछ भी बोर्ड की शक्ति को कम नहीं करेगा, यदि वह भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए लाइसेंसधारी नहीं होने वाले किसी भी व्यक्ति को बिजली की आपूर्ति के लिए अलग-अलग टैरिफ तय करना आवश्यक या समीचीन समझता है। किसी भी क्षेत्र की, आपूर्ति की प्रकृति और उद्देश्य जिसके लिए आपूर्ति की आवश्यकता है और कोई अन्य प्रासंगिक कारक।

(4) बिजली की आपूर्ति के लिए टैरिफ और नियम और शर्तें तय करने में, बोर्ड किसी भी व्यक्ति को अनुचित प्राथमिकता नहीं देगा।

22. क्या केपीटीसी द्वारा किसी उपभोक्ता को बिजली की आपूर्ति अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(डी) (आई) के अर्थ के तहत माल की बिक्री और खरीद है? हम ऐसा नहीं सोचते। हालाँकि अनुभाग का शीर्षक या

सीमांत नोट "बोर्ड द्वारा लाइसेंसधारियों के अलावा अन्य व्यक्तियों को बिजली की बिक्री"की बात करता है, लेकिन अनुभाग का सीमांत नोट या शीर्षक अनुभाग के निर्माण के लिए कोई वैध सहायता प्रदान नहीं कर सकता है। धारा 49 किसी भी ऐसे व्यक्ति को बिजली की आपूर्ति की बात करती है जो लाइसेंसधारी नहीं है, उक्त नियमों और शर्तों पर जैसा कि बोर्ड उचित समझता है और ऐसी आपूर्ति के उद्देश्य के लिए मुफ्त समान टैरिफ प्रदान करता है। यह न्यायालय *दक्षिणी पेट्रोकेमिकल इंडस्ट्रीज* (सुप्रा) में पहले ही कह चुका है कि आपूर्ति का मतलब बिक्री नहीं है। दरअसल, कंपनी ने अपने मामले को धारा 2(1)(डी)(ii) के अंतर्गत कवर किया है, न कि 2(1)(डी)(i) के तहत, क्योंकि कंपनी द्वारा उठाया गया विवाद समय सीमा के भीतर विचाराधीन सेवाओं का गैर-निष्पादन के संबंध में है । इसलिए, शिकायत की ररखरखाव के प्रयोजनों के लिए, यह देखना महत्वपूर्ण है कि क्या धारा 2(1)(डी)(ii) के अर्थ में सेवा में कमी है। अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(ओ) के तहत, 'सेवा' का अर्थ किसी भी विवरण की सेवा है जो संभावित उपयोगकर्ताओं को उपलब्ध कराई जाती है और इसमें विद्युत या अन्य ऊर्जा की आपूर्ति के संबंध में सुविधाओं का प्रावधान शामिल है। धारा 2(1)(जी) के तहत "कमी"का अर्थ प्रदर्शन की गुणवत्ता, प्रकृति और तरीके में कोई गलती, अपूर्णता, कमी या अपर्याप्तता है जिसे किसी भी कानून के तहत या उसके तहत बनाए रखा जाना आवश्यक है या किया गया है या किसी अनुबंध के अनुसरण में या अन्यथा किसी

सेवा के संबंध में किसी व्यक्ति द्वारा किया जाने वाला दायित्व है। जैसा कि 'सेवा'की परिभाषा में बताया गया है, विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति के संबंध में सुविधाओं का प्रावधान एक सेवा है। बोर्ड या केपीटीसी द्वारा किसी उपभोक्ता को बिजली की आपूर्ति धारा 2(1)(ओ) के तहत 'सेवा' के रूप में कवर की जाएगी और यदि किसी उपभोक्ता को विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति सहमति के अनुसार समय पर प्रदान नहीं की जाती है, तो धारा (2)(1)(जी) के तहत सेवा में कमी का मामला बन सकता है।

23. केपीटीसी के विद्वान वकील ने *एसडीओ, बिजली और अन्य बनाम वी. बीएस लोबाना* (2005) 6 एससीसी 280 के मामले में इस न्यायालय के एक आदेश पर अपने तर्क के समर्थन में आश्रय किया कि वर्तमान जैसे मामले में, उपभोक्ता फोरम एक उपयुक्त मंच नहीं है। हमें डर है कि विद्वान वकील द्वारा प्रचारित ऐसा कोई भी पूर्ण प्रस्ताव उक्त आदेश से उजागर नहीं आता है। उक्त आदेश अपने स्वयं के तथ्यों तक ही सीमित है जो पैराग्राफ 3 से स्पष्ट है जो इस प्रकार है:

> "प्रतिवादी ने लिखित दलीलें दाखिल की हैं। हमने वही पढ़ा है. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हमारा विचार है कि जिला फोरम में जाने के बजाय, प्रतिवादी को विद्युत अधिनियम, 1910 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 26(6)

के तहत एक आवेदन दायर करना चाहिए था। मामले को विद्युत निरीक्षक के पास भेज दिया गया है।"

24. विद्वान वकील ने आग्रह किया कि 'सेवा' की परिभाषा सीमित प्रकृति की है और बिजली के संबंध में सुविधाएं प्रदान करने तक ही सीमित है। उनके अनुसार, सुविधा एक अभिव्यक्ति है जो किसी संस्थापन को बिजली की आपूर्ति की सुविधा प्रदान करती है और सेवा की परिभाषा में बिजली की आपूर्ति शामिल नहीं है। विद्वान वकील का यह तर्क गलत धारणा पर आधारित है कि बिजली की आपूर्ति बिजली की बिक्री है और अभिव्यक्ति 'आपूर्ति' का उपयोग 'बिक्री' का पर्याय है। हम पहले ही ऊपर देख चुके हैं, जिसे हमें दोहराने की आवश्यकता नहीं है, कि केपीटीसी द्वारा किसी उपभोक्ता को बिजली की आपूर्ति बिजली की बिक्री नहीं है। 'आपूर्ति' शब्द 'बिक्री' का पर्यायवाची नहीं है। हम दक्षिणी पेट्रोकेमिकल इंडस्ट्रीज कंपनी लिमिटेड (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा कही गई बात को दोहराते हैं कि आपूर्ति का मतलब बिक्री नहीं है। 2002 के अधिनियम 62 द्वारा धारा 2(1)(डी)(ii) में डाली गई अभिव्यक्ति 'लेकिन इसमें वह व्यक्ति शामिल नहीं है जो किसी व्यावसायिक उद्देश्य के लिए ऐसी सेवाओं का लाभ उठाता है'वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं है चूंकि विवाद संशोधन से पहले की अवधि से संबंधित है।

25. हमने ऊपर जो चर्चा की है, उसमें कंपनी द्वारा जिला फोरम के समक्ष की गई शिकायत को सुनवाई योग्य नहीं होना नहीं कहा जा सकता है और हम मानते हैं, जैसा कि हमें करना चाहिए, वह शिकायत सुनवाई योग्य है।

26. जहां तक सिविल अपील संख्या 7784/2002 का संबंध है, शिकायतकर्ता (यहां अपीलकर्ता) टेक्नो बैटरीज का एकमात्र मालिक है जो एक बैटरी चार्जिंग इकाई है। शिकायतकर्ता के अनुसार, कर्नाटक बिजली बोर्ड (अब 'केपीटीसी') द्वारा आपूर्ति की जाने वाली बिजली के लिए देय शुल्क "पावर-टैरिफ, एलटी-5"के तहत हैं, लेकिन 6 मार्च, 1990 के बिल में, रु। 22,628.40 की मांग "ऑडिट शॉर्ट क्लेम" के रूप में इस आधार पर की गई थी कि शिकायतकर्ता द्वारा बिजली की खपत के लिए देय शुल्क टैरिफ-अनुसूची एलटी-3 के तहत हैं न कि एलटी-5 के तहत। शिकायतकर्ता ने मांग को चुनौती देते हुए बेंगलुरु में जिला फोरम का रुख किया। जिला फोरम ने 22 फरवरी, 1994 के अपने आदेश के तहत शिकायत को स्वीकार कर लिया। केपीटीसी ने राज्य आयोग के समक्ष अपील दायर की। राज्य आयोग ने अपने आदेश दिनांक 19 जून, 1997 द्वारा इस आधार पर अपील की अनुमति दी कि शिकायतकर्ता अधिनियम, 1986 की धारा 2(1)(डी) के अर्थ के तहत उपभोक्ता नहीं था और परिणामस्वरूप, उसने आयोग के आदेश को रद्द कर दिया। जिला मंच. राज्य आयोगके आदेश से व्यथित होकर, शिकायतकर्ता ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष संशोधन को प्राथमिकता

दी। पुनरीक्षण आवेदन इसलिए खारिज कर दिया गया क्योंकि शिकायतकर्ता उपस्थित नहीं था और इसलिए भी कि राष्ट्रीय आयोग राज्य आयोग द्वारा पारित आदेश से संतुष्ट था। यह अपील राष्ट्रीय आयोग द्वारा पारित आदेश दिनांक 1 दिसंबर 2000 से उत्पन्न हुई है।

27. सिविल अपील संख्या 1879/2003 में विवाद (ii) और (iii) से निपटने के दौरान हमारे द्वारा पहले ही की गई चर्चा के मद्देनजर, यह माना जाना चाहिए कि एचवी बालचंद्र राव की शिकायत अधिनियम, 1986 की धारा 2 (1)(डी)(i)(ii) के तहत की गई है।

28. उपरोक्त कारणों से:

(1) सिविल अपील संख्या 1879/2003 खारिज की जाती है, राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग द्वारा पारित 7 अक्टूबर, 2002 के आदेश और 15 जून, 1995 को पारित कर्नाटक राज्य उपभोक्ता निवारण आयोग के आदेश की पुष्टि की जाती है और, तदनुसार, शिकायत कानून के अनुसार निपटान के लिए जिला फोरम को भेजी जाती है।

(2) सिविल अपील संख्या 7748/2002 की अनुमति दी जाती है और राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग द्वारा पारित आदेश दिनांक 1 दिसंबर, 2000 और कर्नाटक राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग द्वारा पारित आदेश दिनांक 19 जून, 1997 को रद्द कर दिया जाता है। अपील

संख्या 168/1994 को कानून के अनुसार निपटान के लिए कर्नाटक राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग की फ़ाइल में बहाल किया गया है।

(3) पार्टियां अपनी लागत स्वयं वहन करेंगी।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी इशा सांगी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है। अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।